

भिकतयोग



श्रीमद् भगवद्गीता का बारहवाँ अध्याय



WWW.GEETAYAN.COM anandkidak@gmail.com

अजुन उवाय
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते। येचाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।
अर्जुन उवाच
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते। येचाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।
अर्जुन उवाच
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते। येचाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।
अर्जुन उवाच
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते। येचाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।
अर्जुन उवाच
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते। येचाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।
जो भक्त इस प्रकार निरन्तर आप में लगे रहकर सगुण भगवान् की उपासना करते हैं और जो अविनाशी निराकार की उपासना करते हैं, उनमें से उत्तम योगवेता कौन हैं? (12.1)

श्रा भगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।
श्री भगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।
श्री भगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।
श्री भगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।
श्री भगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।
मुझमें मन लगाकर निरन्तर मुझमें लगे हुए जो भक्त परम श्रद्धा से युक्त होकर
मेरी उपासना करते हैं, वे मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ योगी हैं। (12.2)

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च क्टस्थमचलं धुवम्।।
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम्।।
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं धुवम्।।
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं धुवम्।।
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम्।।
जो अपनी इन्द्रियों को वश में करके अचिन्त्य, सब जगह परिपूर्ण, अनिर्देश्य, कूटस्थ,
अचल, धुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत
अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.3)
और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.3)
और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.3) संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.3)
और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.3) संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः। ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतिहते रताः।।
और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.3) संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।

संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतिहते रताः।।
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः। ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतिहते रताः।।
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतिहते रताः।।
जो अपनी इन्द्रियों को वश में करके अचिन्त्य, सब जगह परिपूर्ण, अनिर्देश्य, कूटस्थ
•
अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धिवाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.4)
अचल, धुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत
अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धिवाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.4)
अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धिवाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.4) क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।
अचल, धुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धिवाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.4) क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।
अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणि मात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धिवाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं। (12.4) क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।

क्लेशिडिधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।
अव्यक्त में आसक्त चित्तवाले उन साधकों को (अपने साधन में) कष्ट होता है; क्योंवि देहाभिमानियों के द्वारा अव्यक्त-विषयक गति कठिनाई से प्राप्त की जाती है। (12.5
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्। भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्। भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।
हे पार्थ ! मुझमें आविष्ट चित्तवाले उन भक्तों का मैं मृत्युरूप संसार-समुद्र से शीघ्र ही उद्धार करने वाला बन जाता हूँ। (12.7)
मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।।

परन्तु जो कर्मों को मेरे अर्पण कर के और मेरे परायण होकर अनन्य योग से

मेरा ही ध्यान करते हुए मेरी उपासना करते हैं। (12.6)

निवसिष्यसि मय्येव अत उर्ध्वं न संशयः।।
मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।।
मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः।।
मय्येव मन आधत्स्व मिय बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत उर्ध्वं न संशयः।।
तू मुझमें मन लगा और मुझमें ही बुद्धि को लगा; इसके बाद तू मुझमें ही निवास करेगा - इसमें संशय नहीं है। (12.8)
करेगा - इसमें संशय नहीं है। (12.8) अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।

अथ । चत्त समाधातु न राक्नाणि माय । स्यरम्। अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय।।
अथ चितं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्। अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय।।
अगर तू मन को मुझमें अचल भाव से अर्पण करने में समर्थ नहीं है, तो धनञ्जय तू अभ्यासयोग के द्वारा मेरी प्राप्ति की इच्छा कर। (12.9)
अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव। मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिमवाप्स्यसि।।

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।
अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।
अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।
अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।
अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।
अगर मेरे योग के आश्रित हुआ तू इसे भी करने में असमर्थ है, तो मन-इन्द्रियों को वश में करके सम्पूर्ण कर्मों के फल का त्याग कर। (12.11)
श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते। ध्यानात्कर्मफलत्यागरूत्यागाच्छान्तिरनन्तरम्।।

अगर तू अभ्यास में भी असमर्थ है, तो मेरे लिये कर्म करने को तत्पर हो जा। मेरे

लिये कर्मों को करता हुआ भी तू सिद्धि को प्राप्त हो जायगा। (12.10)

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते। ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्।।

अभ्यास से शास्त्र ज्ञान श्रेष्ठ है, शास्त्र ज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी सब कर्मों के फल का त्याग श्रेष्ठ है। कर्मफल त्याग से तत्काल ही परम शान्ति प्राप्त हो जाती है। (12.12)

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखस्खः क्षमी।।

निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।
अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।
अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।
अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।
सब प्राणियों में द्वेष भाव से रहित, सबका मित्र और दयालु, ममता रहित, अहंका रहित, सुख दुःख की प्राप्ति में सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट, योगी, शरीर को वर्ष में किये हुए, दढ़ निश्चयवाला मुझमें अर्पित मन बुद्धि वाला जो मेरा भक्त है, वर्ष मुझे प्रिय है। (12.13 - 12.14)
रहित, सुख दुःख की प्राप्ति में सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट, योगी, शरीर को वश् में किये हुए, दढ़ निश्चयवाला मुझमें अर्पित मन बुद्धि वाला जो मेरा भक्त है, वर्

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धियाँ मद्भक्तः स मे प्रियः।।
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धियाँ मद्भक्तः स मे प्रियः।।
सन्त्ष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धियाँ मद्भक्तः स मे प्रियः।।
सब प्राणियों में द्वेष भावसे रहित, सबका मित्र और दयालु, ममता रहित, अहंकार रहित, सुख दुःख की प्राप्ति में सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट,योगी, शरीर को वश में किये हुए, दृढ़ निश्चयवाला, मुझमें अर्पित मन-बुद्धिवाला जो मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है। (12.13 - 12.14)
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगेर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः। हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः। हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।
जिससे किसी प्राणी को उद्वेग नहीं होता और जिसको स्वयं भी किसी प्राणी उद्वेग नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (ईर्ष्या), भय और उद्वेगसे रहित है, वह मुड् प्रिय है। (12.15)
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः। सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।

मुझे प्रिय है। (12.16)
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचित न काङ्क्षति। शुभाशुभपरित्यागी भिकतमान्यः स मे प्रियः।।
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचित न काङ्क्षति। शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः।।
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचित न काङ्क्षति। शुभाशुभपरित्यागी भिक्तमान्यः स मे प्रियः।।
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचित न काङ्क्षति। शुभाशुभपरित्यागी भिक्तमान्यः स मे प्रियः।।
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचित न काङ्क्षति। शुभाशुभपरित्यागी भिक्तमान्यः स मे प्रियः।।
जो न हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है और जो शुभ- अशुभ कर्मों में राग-द्वेष का त्यागी है, वह भक्तिमान् मनुष्य मुझे प्रिय है। (12.17)
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।

Page | 14

www.geetayan.com

anandkidak@gmail.com

जो आकाङ्क्षा से रहित, बाहर-भीतर से पवित्र, दक्ष, उदासीन, व्यथा से रहित और सभी

आरम्भों का अर्थात् नये-नये कर्मों के आरम्भ का सर्वथा त्यागी है, वह मेरा भक्त

समः शत्री च मित्रं च तथा मानापमानयाः। शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। शीतोष्णस्खद्ःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।
रातिष्यसुखदुःखपु समः सङ्गापपाजतः।।
जो पुरुष शत्रु और मित्र में तथा मान और अपमान में सम है; जो शीत-उष्ण व सुखदु:खादिक द्वन्द्वों में सम है और आसक्ति रहित है। (12.18)
जो पुरुष शत्रु और मित्र में तथा मान और अपमान में सम है; जो शीत-उष्ण व
जो पुरुष शत्रु और मित्र में तथा मान और अपमान में सम है; जो शीत-उष्ण व सुखदु:खादिक द्वन्द्वों में सम है और आसिक्त रहित है। (12.18) तुल्यनिन्दास्तुतिमाँनी सन्तुष्टो येनकेनचित्।

तुल्यनिन्दास्तुतिमौनी सन्तुष्टो येनकेनचित्। अनिकेतः स्थिरमतिर्भिक्तमानमे प्रियो नरः।।
तुल्यनिन्दास्तुतिमाँनी सन्तुष्टो येनकेनचित्। अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमानमे प्रियो नरः।।
जिसको निन्दा और स्तुति दोनों ही तुल्य है, जो मौनी है, जो किसी अल्प वस्तु से भी सन्तुष्ट है, जो अनिकेत है, वह स्थिर बुद्धि का भक्तिमान् पुरुष मुझे प्रिय है। (12.19)
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते। श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।

जो भक्त श्रद्धावान् तथा मुझे ही परम लक्ष्य समझने वाले हैं और इस यथोक्त धर्ममय अमृत का अर्थात् धर्ममय जीवन का पालन करते हैं, वे मुझे अतिशय प्रिय हैं।

सम्पूर्ण अध्याय का अभ्यास
अर्जुन उवाच
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते।
येचाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।
श्री भगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं धुवम्।।
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतिहते रताः।।
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।
ये तु सर्वाणि कर्माणि मिय संन्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।
मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत उर्ध्वं न संशयः।।
अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय।।
अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिमवाप्स्यसि।।
अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्।।
श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्।।
अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धियौ मद्भक्तः स मे प्रियः।।
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भिक्तमान्यः स मे प्रियः।।

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः।।
तुल्यनिन्दास्तुतिमाँनी सन्तुष्टो येनकेनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः।।
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषस्तु ब्रहमविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे भक्तियोगोनाम द्वादशोऽध्याय।।